बच्चों की कहानियों में बच्चों की आवाज़

ज्योति देशमुख और शिवानी तनेजा

हम मानते हैं कि स्कूल एक ऐसा संस्थान है जो बच्चों की ख़ुशहाली को सुनिश्चित करता है, लेकिन स्कूल के भीतर के और स्कूल से जुड़े सभी फ़ैसले वयस्कों द्वारा लिए जाते हैं। कई बार तो, कोई स्कूल किस तरह काम करता है इसके लिए वे वयस्क ज़िम्मेदार होते हैं जो बच्चों के जीवन की वास्तविकताएँ तक नहीं जानते। वयस्क बच्चों से ज़्यादा जानते हैं, इस मान्यता को जाँचने की ज़रूरत है। इस लेख में यह पता लगाने की कोशिश की गई है कि कैसे बच्चों को कहानी की क़िताबों के ज़रिए उनकी स्कूली जीवन की समझ को साझा करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है और साथ ही इस लेख में बाल साहित्य में बच्चों की एजेंसी बढ़ाने की भी हिमायत की गई है।

'स्कूल में सीखा और सिखाया' (मुस्कान, 2022) भोपाल की गंगा नगर नामक शहरी झुग्गी बस्ती की एक गोण्ड जनजाति की लड़की निकिता धुर्वे द्वारा लिखी गई एक कहानी है। कहानी अपने दोस्तों के साथ उसके स्कूल जाने की उत्सुकता से शुरू होती है, जो कि जल्द ही उनके कक्षा अनुभवों से निराशा में तब्दील हो जाती है। वे स्कूल के काम करने के तौर-तरीक़ों में ख़ुद को खोया हुआ महसूस करते हैं। शिक्षक उनकी घरेलू भाषा, गोण्डी से इतर भाषा में बोलते हैं और ऐसे में जब वे कुछ समझना चाहते हैं तो उस पर ध्यान नहीं दिया जाता है। बच्चे हार मानकर औपचारिक शिक्षा के अपने सपने को छोड़ना नहीं चाहते, इसलिए वे इस परिस्थिति से बाहर निकलने के रास्ते तलाशना शुरू करते हैं। इस चर्चा के ज़रिए, यह कम उम्र की लेखिका शिक्षणशास्त्र पर उपयुक्त प्रश्न उठाती है।

कक्षा में कहानी

हमारे स्कूल में, कक्षा-5 में पढ़ रहे 10 से 15 वर्ष के आयु वर्ग के 20 बच्चों के एक मिश्रित समूह में इस क़िताब को प्रस्तुत किया गया। यह काफ़ी जादुई लग रहा था कि कैसे इतनी आसानी से बच्चे इस कहानी की परिस्थितियों से जुड़ाव महसूस कर रहे थे। कहानी में दो-तीन वाक्य गोण्डी में हैं और जब उन्हें पढ़ा गया, तो बच्चों के अनुरोधों की झड़ी लग गई। "फिर से पढ़िए न!", "यह अभी क्या कहा गया?", उन्होंने पूछा। बातचीत के बहाव और कुछ जाने-पहचाने शब्दों के आधार पर, वे अटकलें लगाने की कोशिशें कर रहे थे कि आख़िर क्या कहा जा रहा है। कक्षा में कोई गोण्डी बच्चे नहीं थे, पर उन बच्चों के गोण्डी बोलने वाले दोस्त ज़रूर थे। एक सुगमकर्ता होने के नाते, यह भाँपा जा सकता था कि यह उत्सुकता केवल इसलिए नहीं थी कि यह एक ऐसी भाषा थी जिससे वे थोड़े-बहुत अवगत थे, बल्कि इस उत्सुकता का अधिक लेना-देना तो कहानी की जड़ से था। हिमाचल प्रदेश में बच्चों की एक टोली के साथ इसी कहानी को पढ़ने पर रागिनी ललित ने भी यह पाया कि पहाड़ी बच्चे भी निकिता और उसके दोस्तों के साथ तुरन्त जुड़ाव महसूस करने लगे थे।[i]

अनुभव साझा करना

कहानी सुनाने के बाद, कुछ प्रेरक प्रश्नों के ज़रिए बच्चों को उनके अनुभव साझा करने में सहयोग दिया गया, जैसे "उन चार लड़कियों के बारे में तुम क्या सोचते हो?", "क्या तुमने कभी स्कूल में खोया-सा महसूस किया है?", "तुम क्या करोगे यदि तुम गुम हुए से महसूस करो?", "क्या तुमने कभी किसी वयस्क से उनके काम करने के तरीक़े में बदलाव लाने के लिए कहा है?" बच्चे अपने-अपने दृष्टिकोण साझा करने के लिए उत्साहित थे और हमें उनसे आग्रह करना पड़ रहा था कि वे दूसरों की कहानियाँ भी सुनें। ये कहानियाँ मौखिक रूप से साझा की गईं और कुछ बच्चों ने अपनी कहानियाँ लिखीं भी। तीन प्रकार की कहानियाँ उभरीं।

स्कूल के अनुभव

एक 10 वर्षीय लड़के ने साझा किया कि उसके गाँव के स्कूल में, शिक्षक कुछ बोर्ड पर लिखते और बच्चों से उसकी नक़ल करने को कहते; यदि बच्चे लिख न पाते या ग़लतियाँ करते, तो उन्हें 'पेड़ से टूटी ताज़ी हरी डण्डी' से पीटा जाता। "हम कमरे से बाहर निकलने के बहाने ही सोचते रहते। मुझे स्कूल जाने का मन ही नहीं करता था, पर परिवार के सदस्य जाने के लिए हम पर दबाव डालते।" ऐसा ही एक अनुभव 11 वर्ष की एक लड़की ने भी साझा किया, जिसने लिखा कि, "सर हमें याद करने के लिए कहते, पर मैं वह कर ही नहीं पाती। मैं सचमुच कोशिश करती पर नहीं कर पाती। तो वे जब हमें छड़ी से मारते, तो मैं बहुत दुखी हो जाती।" एक अन्य लड़की ने भी लिखा, "सर हमें घूरा करते, ऊपर से नीचे तक अपनी नज़रें दौड़ाया करते।" वह यह बात अपनी माँ को नहीं बता पाई पर इतना ज़रूर बताया कि ये शिक्षक उन्हें ठीक से नहीं पढ़ाते। उसकी माँ ने उससे पढ़ाई छोड़ देने के लिए कहा।

14 वर्ष की एक लड़की ने, जिसने अपनी शिक्षा यात्रा केवल एक साल पहले शुरू की थी, स्कूल का हिस्सा बनने के अपने पहले के प्रयास के बारे में लिखा। "जब हम पहली बार स्कूल गए थे, हम वहाँ केवल तीन दिनों के लिए थे। हम वहाँ पढ़ नहीं पाते थे। शुरुआत में, हमने सोचा कि ऐसा इसलिए है क्योंकि वह एक नई जगह है। मैं आशा करती कि वहाँ का आदमी (शिक्षक) हमें मारेगा नहीं। मेरी दोस्त ने मुझे आश्वासन दिलाया कि वह नहीं मारेगा और कहा कि हमें बैठकर अपनी क़िताब खोल लेनी चाहिए। पर वह एक ख़ाली नोटबुक थी। शिक्षक ने बड़े-बड़े वाक्यों से बोर्ड भर दिया। मुझे पढ़ना नहीं आता था, पर शिक्षक ने कहा कि वे अन्य कुछ नहीं सिखाएँगे।" तो, मेरी दोस्त ने कहा, "हम किसी और स्कूल में पढ़ लेंगे।" शिक्षक को मानो परवाह ही नहीं थी और उन्होंने बस यह कहा, "हाँ, जाओ।"

सुगमकर्ता होने के नाते, हमने स्कूल से जुड़े कुछ सकारात्मक अनुभव प्राप्त करने की कोशिश की, पर ऐसा एक भी अनुभव नहीं था।

उनकी भाषा और बाहरी दुनिया से जुड़े अनुभव

एक 18 वर्ष की किशोरी ने साझा किया कि जब वह अपने दोस्तों के साथ अपनी भाषा (पारधी) में बात करती, तो अन्य बच्चों को लगता कि वे उनके बारे में बात कर रहे हैं और शिक्षक से शिकायत कर देते। "लंच के समय, वे बच्चे हमसे दूर बैठा करते और यह कहकर हमसे दूरी बना लिया करते कि हम पारधी हैं।" ऐसा ही एक अनुभव कंजर समुदाय की एक बच्ची ने भी साझा किया था। उसने लिखा, "जब मैं पहले स्कूल जाया करती थी, तो मेरे स्कूल के बच्चे हमारा और हमारी भाषा का मज़ाक उड़ाया करते थे। अगर कोई उनका मज़ाक उड़ाए, तो उन्हें कैसा महसूस होगा? किसी को भी हमें इसलिए ताना नहीं मारना चाहिए कि हम एक अलग भाषा बोलते हैं।"

वयस्कों के सामने अपने विचार रखने के अनुभव

14 वर्ष की एक लड़की ने साझा किया कि कई बार उसकी माँ उसे भीख माँगने के लिए भेजा करतीं, जो उसे बिलकुल पसन्द नहीं था। उसकी माँ उस पर तब भी ग़ुस्सा करतीं जब वह कचरा बीनने नहीं जाती। वह अपनी माँ से बहुत डरती थी (और अब भी डरती है) और उनसे कह नहीं पाती थी कि वह भीख माँगने नहीं जाना चाहती। पर एक दिन, उसने साहस जुटाया और अपनी माँ से कह दिया। उसकी माँ ने उसे भीख माँगने भेजना बन्द कर दिया और स्कूल में उसका दाख़िला करवा दिया।

इस लेख की एक लेखिका ने भी अपने स्कूली जीवन का एक निजी अनुभव साझा किया, "जब मैं कक्षा-10 में थी, तो गणित के शिक्षक, तिवारी सर, हमेशा मुझे बोर्ड के पास बुलाते और सवाल समझाए बिना ही मुझे हल करने के लिए निर्देश देते। जब मैं नहीं कर पाती, तब वे मेरी चोटी खींचते। ऐसा कई दिनों तक चलता रहा। मुझे उनसे डर लगा था और मैं उनकी कक्षा से बचना चाहती थी। एक दिन, जब वे कक्षा ख़त्म कर जाने लगे, मैं साहस जुटाकर उनके पीछे दौड़ी। मैंने दो-टूक उनसे पूछा कि वे मेरे साथ ऐसा क्यों करते हैं। सर ने शान्ति से जवाब दिया कि वे चाहते थे कि मैं बेहतर करूँ। मैं नहीं जानती थी जवाब में क्या कहूँ। पर उन्होंने उसके बाद से मेरी चोटी खींचना बन्द कर दिया। मेरा उनसे डरने का सिलसिला भी बन्द हो गया।"

बच्चों की अभिव्यक्ति ने साफ़तौर पर निम्नलिखित बातों की ओर इशारा किया :

1. बच्चे भेदभाव को पहचानते हैं। भले ही वे यह भेद या विश्लेषण नहीं कर पाते हों कि यह उनकी भाषा के कारण हो रहा है या जाति के कारण या किसी अन्य कारणवश, लेकिन छोटा महसूस करवाए जाने का अनुभव एक ऐसा अनुभव है जिसे हाशियाकृत समुदायों के कई बच्चे लगातार दुनिया से हासिल करते रहते हैं, वह भी बहुत ही सरलता से प्रभावित होने वाली उम्र में। बड़े होते-होते, इसका उनके व्यक्तित्व पर गहरा और दीर्घकालिक असर पड़ सकता है।

   बच्चों के नकारात्मक अनुभव उनके मन में परतों के रूप में जम जाते हैं। उन्हें पीटे जाने के विवरण उनके मन में छाप छोड़ चुके हैं और इसका बयान उनकी अभिव्यक्ति में साफ़-साफ़ नज़र आता है। कई दफ़ा, बच्चे ऐसी बारीक़ियाँ साझा करते हैं, जैसे वहाँ कौन-कौन था और अन्य पहलू जो कहने को तो उन अनुभवों से सम्बद्ध नहीं होते, पर बच्चे की यादों में अहम भूमिका निभाते हैं। सम्भव है कि उन्हें लगता हो कि ऐसी स्पष्टता उनकी अभिव्यक्ति को अधिक वास्तविक और विश्वसनीय बनाती है या फिर बात महज़ इतनी हो कि वे घटना को उसकी बारीक़ियों से अलग न कर पा रहे हों। बच्चों के लिए इस प्रकार की अभिव्यक्तियों का एक चिकित्सकीय महत्त्व होता है, तब जब कोई वयस्क उनकी अभिव्यक्ति पर, उनके एहसास और उनकी आपबीती को मान्यता दे।

2. जब कक्षा में एक सामूहिक प्रकिया के ज़रिए ऐसे अनुभव साझा किए जाते हैं, तो हर बच्चे को एहसास होता है कि ऐसा केवल 'मेरे साथ' नहीं हुआ। जब बच्चे बहुत छोटे होते हैं, तब भी वे समीक्षात्मक ढंग से इस 'डेटा' (अनुभवों का एक समूह) का विश्लेषण कर पाते हैं कि यह समाज के काम करने का हिस्सा है और यह 'मेरी' ग़लती नहीं है। यह एक ऐसी शिक्षा के लिए ज़रूरी है जो सामाजिक न्याय के मूल्यों पर आधारित हो।

3. हमारी संस्कृति में, यह तथ्य कि एक बच्चा और एक वयस्क (शिक्षक, अभिभावक या संरक्षक/ बड़े के रूप में कोई भी अन्य व्यक्ति) अलग-अलग तरीक़े से सोच सकते हैं कि जो एक बच्चा सोचता है वह भी मूल्यवान है, मान्य नहीं है। इसलिए, ऐसी चर्चाएँ कक्षाओं में नहीं हुआ करतीं।

4. भले ही बच्चे आहत होने या किसी ऐसे के प्रति ग़ुस्सा होने, जिसे उन्होंने 'उनके ख़िलाफ़ होने' की श्रेणी में रखा है, के अनुभव साझा कर पाए; उनमें से अधिकांश के लिए यह आसान नहीं था कि वे उनके 'संरक्षक' को एक ऐसी परिस्थिति में देखें जहाँ वे उसे चुनौती दे रहे हैं। सम्भवतः एक तर्क है जो बच्चे के मन में काम करता है और उनके लिए इस व्यक्ति को मद्देनज़र रखे बग़ैर 'आत्म' की अवधारणा बनाना कठिन है।

यह स्पष्ट है कि *स्कूल में 'सीखा और सिखाया'* जैसी कहानी का उपयोग अलग-अलग सामाजिक-आर्थिक समूहों के विद्यार्थियों के बीच बातचीत के कई दरवाज़े खोलने के लिए किया जा सकता है। भागीदारों को स्कूली जीवन के एक या कई पहलुओं से परेशानी हो सकती है, जैसे कि शिक्षक का व्यवहार, सीखने में कठिनाइयाँ, सहपाठियों के साथ मिलना-जुलना, हिंसा और शोषण। ऐसी चर्चाएँ स्कूल के लिए भी चिन्तन के मौक़े लाती हैं।

उपरोक्त बातचीत साफ़-साफ़ सुझाती है कि स्कूली व्यवस्था को बच्चों के अनुसार ढलने की ज़रूरत है, न कि इसके उलट। अंजलि नरोन्हा भी इस कहानी की समीक्षा में, उपरोक्त अनुभवों को अधिकांश बच्चों के लिए सार्वभौमिक पाती हैं।[ii]

कहानियों में बच्चों की एजेंसी

जैसा कि ऊपर देखा गया, कहानियाँ हमें सुरक्षित वातावरण में बातचीत शुरू करने की आज़ादी देती हैं। उन्हें बहुत निजी होने की ज़रूरत नहीं, लेकिन उन्हें वह डेटा या प्रकरण प्रदान करना चाहिए जहाँ से हम चिन्तन और विमर्श करना शुरू कर सकें। और इसके लिए, हमें ऐसी क़िताबों की ज़रूरत है जहाँ बच्चा केन्द्र में हो; न सिर्फ़ एक क़िरदार के रूप में पर अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ, जिससे कि ऐसी कहानियाँ भी उभर सकें जहाँ बच्चे का दुनिया को देखने का नज़रिया वयस्कों के नज़रियों से भिन्न हो या बच्चों के किसी समूह के बीच अलग-अलग नज़रिए हों।

स्कूल में 'सीखा और सिखाया' कहानी का एक ख़ास पहलू यह है कि इस कहानी में बच्चों को कई स्तरों पर एक आवाज़ दी गई है। पहला, यह कहानी एक बच्चे द्वारा लिखी गई है; दूसरा, बच्चे कैसा महसूस कर रहे हैं, वह कहानी में निकलकर आया है; और आख़िर में, बच्चे सामूहिक तौर पर एक योजना बना रहे हैं और उसे अमल में ला रहे हैं। शिक्षक वह एक व्यक्ति है जो बच्चों का दृष्टिकोण समझता और स्वीकारता है, जिससे कि कहानी को समाधान का बोध और एक सुखान्त मिलता है। पर ऐसा ज़रूरी नहीं कि जीवन में भी हमेशा ऐसा होता हो। इसलिए, यह अधिक ज़रूरी है कि बच्चों की एजेंसी स्पष्टता से स्थापित की जाए।

एजेंसी को बण्डूरा (2017)[iii] द्वारा कुछ यूँ परिभाषित किया गया है, "अपने क्रियाकलापों से जानबूझकर कुछ प्रभाव उत्पन्न करना"; मेथिस (2016)[iv] के अनुसार, "यहाँ एजेंसी से आशय है अपनी पहचान और नज़रियों को ज़ाहिर करना और अन्यों द्वारा सक्रिय रूप से संज्ञान लिए जाने लायक बनाना, ताकि अपने जीवन के निजी, सांस्कृतिक और सामाजिक पहलुओं को बेहतर और सशक्त किया जा सके।" मेथिस साथ ही जोड़ते हैं कि लेखकों और चित्रकारों के पास ऐसी परिस्थितियों और क़िरदारों का निर्माण करने की शक्ति है जिनसे बच्चों की एजेंसी को अधिक समृद्ध बनाया जा सकता है। जिस कहानी पर चर्चा की जा रही है वह अपने शब्दों के ज़रिए, एक हाशियाकृत समुदाय के बच्चे की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और आकांक्षाओं को प्रस्तुत करती है और वहीं कहानी के चित्र हमें कहानी के नायक के जीवन के हालातों का सन्दर्भ प्रदान करते हैं।

हमारे आस-पास ऐसा बहुत सारा बाल-साहित्य है जो स्कूल के विषय को छूता है। हालाँकि, अधिकांश कहानियों की क़िताबें बच्चों के मुख्यधारा की व्यवस्था से जुड़ने के इर्द-गिर्द ही घूमती रहती हैं, इस उद्देश्य से कि पहली बार स्कूल जाते बच्चे को स्कूल या उससे मिलती-जुलती व्यवस्था के लिए तैयार किया जा सके। केवल मुट्ठीभर क़िताबें ही ऐसी हैं जहाँ स्कूली वातावरण में बच्चे की एजेंसी को दर्शाया गया है। प्रथम बुक्स द्वारा इस थीम पर प्रकाशित की गई कई क़िताबों में से, शबनम मिनवाला द्वारा लिखित, द राइट वे स्कूल (2020), एक बच्चे के प्राकृतिक व्यक्तित्व को स्थान प्रदान करने के लिए अलग दिखाई पड़ती है, अब चाहे यह व्यक्तित्व जिज्ञासु प्रवृत्ति का हो या जिस तरह वह बच्ची दिखती या कपड़े पहनती हो। विद्रोह की छपछप (मुस्कान, 2020) ऐसी ही एक अन्य क़िताब है जहाँ लेखक रिनचिन शिक्षक को एक ऐसे व्यक्ति के तौर पर दर्शाती हैं जो बच्चों के साथ बहुत दोस्ताना हैं और जिसकी बाल-केन्द्रित शिक्षापद्धति उसे विद्यार्थियों की मित्र बना देती है, लेकिन कहानी मोड़ लेती है जब यह ज़ाहिर होता है कि वह वयस्क के रूप में अपने पद के तौर पर काम कर रही हैं। यदि वह सच में बच्चों को अपनाना चाहती हैं, तो एक आन्तरिक रूपान्तरण की ज़रूरत होगी।

अधिकांश क़िताबें वयस्कों द्वारा लिखी जाती हैं, जहाँ एक वयस्क की आँखों से (या उसके बचपन की यादों से) किसी बच्चे का नज़रिया क़िताब की कथावस्तु तय करता है। लेकिन अगर हम बच्चों और युवा लोगों को उनकी कहानियों की

क़िताबों के लेखक होने के लिए प्रेरित करें, तो यह बच्चों के लिए एक ऐसा स्थान बनाने की शुरुआत होगी जहाँ वे जो सोचते और महसूस करते हैं, वह सब साझा कर सकते हैं और जहाँ बच्चों के नज़रियों का सम्मान किया जा सकता है।

बच्चों की आवाज़ों को स्थान देने वाली कहानियों के स्कूल में प्रवेश करने पर क्या स्कूली प्रक्रियाओं पर चर्चाएँ शुरू करने और सवाल उठाने की कोई सम्भावना है? थॉमसन और जॉनसन (2007)[v] ज़ोर देते हैं कि शिक्षकों को भी बच्चों की एजेंसी को स्वीकारना होगा, उन्हें 'बेहद सृजनात्मक और बहुत अन्तर्दृष्टि व ज्ञान रखने वाले' व्यक्तियों के तौर पर देखना होगा। जब वयस्क, निकिता की कहानी के शिक्षक की तरह, बच्चों को सुनने के लिए तैयार होते हैं, अपनी कमज़ोरियों को स्वीकारते हैं और इस बात को पहचानते हैं कि कैसे हमारे व्यवहार और तरीक़े बच्चों को अलग और दूर कर देते हैं, तब सम्भवतः हम स्कूल को सभी बच्चों के लिए एक सुरक्षित और ख़ुशहाल जगह बनाने के लिए पहला क़दम लेंगे।

Endnotes

i Lalit, R. (2022) The Cultivation of Safe Spaces Within Schools. Available at: https://feminisminindia.com/2022/01/21/the-cultivation-of-safe-spaces-within-schools/

ii The Book Review, November 2022, Pg. 62

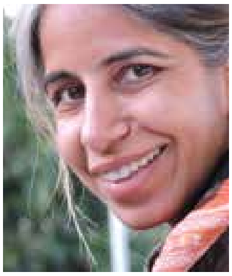
iii Bandura A (2017) Toward a psychology of human agency: pathways and reflections. Perspectives on Psychological Science, 13(2):130–136

iv Janelle B. Mathis (2016) Literature and the Young Child: Engagement, Enactment, and Agency from a Sociocultural Perspective, Journal of Research in Childhood Education, Volume 30, 2016 - Issue 4

v Quoted in Reflecting on childhood and child agency in history: Haring, U. et al. (2019) Palgrave Communications | https://doi.org/10.1057/s41599-019-0259-0



ज्योति देशमुख पिछले नौ सालों से मुस्कान,भोपाल में एक कक्षा सुगमकर्ता के तौर पर काम कर रही हैं। उन्हें बच्चों को पढ़ाने में मज़ा आता है और वे हमेशा कक्षा को सभी के लिए सक्रिय और मज़ेदार बनाने के नए-नए तरीक़े खोजती रहती हैं। उनसे *jdeshmukh025@gmail.com* पर सम्पर्क किया जा सकता है।



शिवानी तनेजा पिछले 25 सालों से भोपाल और उसके इर्द-गिर्द विमुक्त जनजातीय पृष्ठभूमि के और ग़रीब समुदायों के लोगों के बीच काम कर रही हैं। वे मानती हैं कि शिक्षा को एक पृथक अकादमिक घटना के तौर पर नहीं देखा जा सकता और शिक्षाविद होने के नाते, हमें बच्चे की ख़ुशहाली और बुनियादी सशक्तिकरण को एक शैक्षणिक सफर के केन्द्रीय तत्व के तौर पर देखने की ज़रूरत है। उनकी यह सोच उनके सरोकारों और काम की प्राथमिकताओं में भी प्रतिबिम्बित होती है, जैसे कि बच्चों की सामूहिक एजेंसी, कठिन बचपन के बीच मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक न्याय का निर्माण करना। दिल से एक शिक्षक होने के नाते वे प्रतिदिन मुस्कान में किसी कक्षा का हिस्सा होने का लुत्फ़ उठाती हैं और शैक्षणिक कोशिशों के जवाब में विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाओं का अवलोकन कर सीखती रहती हैं। उनसे *shivani@muskaan.org* पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : अतुल वाधवानी **पुनरीक्षण :** भरत त्रिपाठी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय